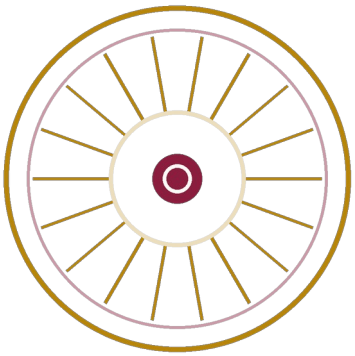

श्रीमद्भगवद्गीता

Easiest Geeta

अध्याय 1: अर्जुनविषादयोग

श्लोक संख्या: 1.01

धृतराष्ट्र उवाच |

धर्मक्षेत्रे कु रुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः |

मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकु र्वत सञ्जय || **01** ||

हिन्दी अनुवाद:

धृतराष्ट्र बोले—हे संजय! धर्मभूमि कु रुक्षेत्र में युद्ध की इच्छा से एकत्र हुए मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया?

सरल व्याख्या:

गीता की शुरुआत धृतराष्ट्र के प्रश्न से होती है। कु रुक्षेत्र के वल एक भौगोलिक मैदान नहीं, बल्कि हमारा अंतर्मन है जहाँ रोज़ 'धर्म' (सद्गुण) और 'अधर्म' (दुर्गुण) के बीच युद्ध चलता है। धृतराष्ट्र का 'मामकाः' (मेरे पुत्र) कहना उनके गहरे मोह और पक्षपात को दिखाता है। अज्ञान में फँ सा मन हमेशा 'मेरा-तेरा' और अपनों-परायों में भेद करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मोह और ममता ही व्यक्ति के भीतर अज्ञान और संशय के बीज बोते हैं।

श्लोक संख्या: 1.02

सञ्जय उवाच |

दृष्ट् वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा |

आचार्यमुपसङ्गम्य राजा वचनमब्रवीत् || **02** ||

हिन्दी अनुवाद:

संजय बोले—उस समय राजा दुर्योधन ने व्यूह रचना युक्त पाण्डवों की सेना को देखकर द्रोणाचार्य के पास जाकर यह वचन कहा।

सरल व्याख्या:

दुर्योधन पाण्डवों की सेना की व्यवस्थित तैयारी देखकर भीतर से घबरा जाता है, लेकिन अपनी घबराहट छिपाने के लिए वह गुरु द्रोणाचार्य के पास जाता है। जब मनुष्य भीतर से कमज़ोर होता है और अधर्म के पक्ष में होता है, तो बड़ी सेना या साधन होने के बाद भी उसका भय समाप्त नहीं होता। वह राजनीति का सहारा लेने लगता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अधर्म के मार्ग पर चलने वाले व्यक्ति का आत्मविश्वास हमेशा डगमगाया रहता है।

श्लोक संख्या: **1.03**

> पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम् |
> व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता || **03** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे आचार्य! आपके बुद्धिमान शिष्य द्रुपदपुत्र (धृष्टद्युम्न) द्वारा व्यूहाकार खड़ी की हुई पाण्डुपुत्रों की इस बड़ी भारी सेना को देखिए।

सरल व्याख्या:
दुर्योधन चालाकी से द्रोणाचार्य को याद दिलाता है कि पाण्डवों का सेनापति धृष्टद्युम्न उन्हीं का शिष्य है, जिसे उन्होंने द्रुपद से शत्रुता जानते हुए भी शिक्षा दी थी। वह गुरु के भीतर पाण्डवों के प्रति सोई हुई कड़वाहट जगाना चाहता है। ईर्ष्यालु व्यक्ति दूसरों की शक्तियों को देखकर हमेशा असुरक्षित महसूस करता है और दूसरों को भड़काने का प्रयास करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... ईर्ष्या मनुष्य को सजग तो रखती है, लेकिन वह सजगता सकारात्मक न होकर भय और द्वेष से भरी होती है।

श्लोक संख्या: **1.04**

> अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि |
> युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः || **04** ||

हिन्दी अनुवाद:
इस सेना में बड़े-बड़े धनुषों वाले तथा युद्ध में भीम और अर्जुन के समान बहुत से शूरवीर हैं, जैसे—सात्यकि (युयुधान), राजा विराट और महारथी द्रुपद।

सरल व्याख्या:
दुर्योधन द्रोणाचार्य के सामने पाण्डव सेना के मुख्य योद्धाओं की गिनती करवा रहा है। वह भीम और अर्जुन को पैमाना मानता है क्योंकि उसका मुख्य डर इन दोनों से ही है। जब हमारे सामने कोई संकट आता है, तो हमारा मन सबसे पहले उन चीज़ों या व्यक्तियों को चिन्हित करता है जिनसे हमें सबसे ज़्यादा ख़तरा महसूस होता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... डर और असुरक्षा की भावना हमेशा शत्रु की शक्ति को बढ़ा-चढ़ाकर देखने पर मजबूर करती है।

श्लोक संख्या: **1.05**

धृष्टके तुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान् |
पुरुजित्कु न्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः || **05** ||

हिन्दी अनुवाद:
धृष्टके तु, चेकितान और पराक्रमी काशिराज तथा पुरुजित, कु न्तिभोज और मनुष्यों में श्रेष्ठ शैब्य।

सरल व्याख्या:
दुर्योधन पाण्डवों के पक्ष में खड़े अन्य शक्तिशाली राजाओं के नाम ले रहा है। यह उसकी आंतरिक व्याकु लता को दिखाता है। वह द्रोणाचार्य को यह समझाना चाहता है कि सामने कोई साधारण विरोधी नहीं खड़ा है, बल्कि धर्म के पक्ष में बड़े-बड़े शूरवीर एक हो चुके हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सत्य और न्याय के पक्ष में खड़े सहयोगी भले ही कम दिखें, पर उनकी निष्ठा विरोधी के मन में भय पैदा कर देती है।

श्लोक संख्या: **1.06**

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान् |
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः || **06** ||

हिन्दी अनुवाद:
पराक्रमी युधामन्यु और बलवान उत्तमौजा तथा सुभद्रापुत्र अभिमन्यु और द्रौपदी के पाँचों पुत्र—ये सब के सब महारथी हैं।

सरल व्याख्या:
यहाँ दुर्योधन पाण्डव सेना के युवा और तेजस्वी वीरों (जैसे अभिमन्यु और द्रौपदी के पुत्रों) का ज़िक्र करता है। महारथी का अर्थ होता है जो अके ला ही दस हज़ार योद्धाओं से लड़ सके । दुर्योधन को दिख रहा है कि विरोधी पक्ष की नई पीढ़ी भी पूरी तरह तैयार और संकल्पित है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब मन में किसी बात का भय बैठ जाता है, तो वह हर छोटे-बड़े पहलू का विश्लेषण करके खुद को और अधिक डराने लगता है।

श्लोक संख्या: **1.07**

> अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम |
> नायका मम सैन्यस्य संज्ञानार्थं तान्ब्रवीमि ते || **07** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे द्विजश्रेष्ठ (ब्राह्मणों में श्रेष्ठ द्रोणाचार्य)! हमारे पक्ष में भी जो मुख्य-मुख्य नायक हैं, उनको आप जान लीजिए। आपकी जानकारी के लिए मैं अपनी सेना के सेनापतियों के नाम आपको बताता हूँ।

सरल व्याख्या:

सामने वाले की ताकत गिनते-गिनते दुर्योधन को अहसास होता है कि कहीं उसकी बातें सुनकर द्रोणाचार्य का हौसला न डगमगा जाए या वे यह न सोच लें कि उनका राजा कमज़ोर पड़ गया है। इसलिए वह तुरंत पासा पलटता है और अपनी सेना की तारीफ करने लगता है। यह एक चतुर और कू टनीतिक दिमाग का लक्षण है जो अपनी कमज़ोरी को शब्दों के जाल से छिपाना जानता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अपनी घबराहट को छिपाने के लिए मनुष्य अक्सर झूठे आत्मविश्वास का दिखावा करने लगता है।

श्लोक संख्या: **1.08**

> भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृ पश्च समितिञ्जयः |
> अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च || **08** ||

हिन्दी अनुवाद:

आप (द्रोणाचार्य), पितामह भीष्म, कर्ण और युद्ध विजयी कृ पाचार्य तथा वैसे ही अश्वत्थामा, विकर्ण और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा।

सरल व्याख्या:

दुर्योधन अपनी सेना के सबसे बड़े स्तंभों का नाम लेता है। वह सबसे पहले द्रोणाचार्य का नाम आदर देने के लिए लेता है, फिर भीष्म का जो अजेय हैं। वह कर्ण का नाम लेता है जो उसका सबसे बड़ा विश्वास है। दुर्योधन को अपनी सेना की ताकत पर पूरा भरोसा है, क्योंकि सांसारिक दृष्टि से कौरवों की सेना पाण्डवों से बहुत बड़ी और अनुभवी थी।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... बाहरी साधनों और बड़े-बड़े दिग्गजों के होने से भौतिक बल तो मिल सकता है, लेकिन आत्मिक बल नहीं।

श्लोक संख्या: **1.09**

> अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः |
> नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः || **09** ||

हिन्दी अनुवाद:

और भी मेरे लिए जीवन की आशा को त्याग देने वाले बहुत से शूरवीर हैं, जो अनेक प्रकार के शस्त्रों से प्रहार करने वाले और सब के सब युद्ध कला में अत्यंत चतुर हैं।

सरल व्याख्या:

यहाँ दुर्योधन अहंकार और मोह के वश में होकर कहता है कि ये सब 'मदर्थे' (मेरे लिए) अपनी जान हथेली पर रखकर आए हैं। वह भूल जाता है कि भीष्म या द्रोणाचार्य उसके लिए नहीं, बल्कि हस्तिनापुर के सिंहासन के प्रति अपनी प्रतिज्ञा और कर्तव्य के कारण बंधे हुए हैं। जब व्यक्ति अहंकार में होता है, तो वह हर परिस्थिति और व्यक्ति को अपने स्वार्थ के चश्मे से देखने लगता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अहंकारी मनुष्य दूसरों के समर्पण को भी अपने प्रभाव की सफलता मान लेता है।

श्लोक संख्या: **1.10**

> अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम् |
> पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् || **10** ||

हिन्दी अनुवाद:

भीष्म पितामह द्वारा रक्षित हमारी वह सेना सब प्रकार से अजेय (अपार) है और भीम द्वारा रक्षित इन लोगों की यह सेना जीतने में सुगम (सीमित) है।

सरल व्याख्या:

दुर्योधन तुलना करता है। वह कहता है कि हमारी सेना भीष्म जैसे महानायक के हाथ में है, इसलिए वह असीमित और अजेय है, जबकि उनकी सेना भीम के संरक्षण में है जो सीमित है। लेकिन भीतर की घबराहट के कारण उसे अपनी बड़ी सेना भी 'अपर्याप्त' (असुरक्षित) लग रही है और पाण्डवों की छोटी सेना भी 'पर्याप्त' (मजबूत) दिख रही है। अधर्म चाहे जितना बड़ा आवरण ओढ़ ले, वह धर्म की छोटी सी चिंगारी के सामने भी खुद को कमज़ोर ही पाता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संख्या बल कितना ही बड़ा क्यों न हो, अगर भीतर आत्मिक शुद्धि और सत्य नहीं है, तो शंका हमेशा बनी रहती है।

श्लोक संख्या: **1.11**

> अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः |
> भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि || **11** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसलिए आप सब लोग सब मोर्चों पर अपनी-अपनी जगह स्थित रहते हुए, सब के सब निश्चित रूप से पितामह भीष्म की ही सब ओर से रक्षा करें।

सरल व्याख्या:
दुर्योधन अपनी सेना के सभी सेनापतियों को आदेश देता है कि वे अपने-अपने मोर्चे पर डटे रहें और भीष्म पितामह को सुरक्षा चक्र प्रदान करें। वह जानता है कि जब तक भीष्म जीवित हैं, कौरवों की विजय निश्चित है। यह श्लोक प्रबंधन (Management) का एक बड़ा सूत्र देता है कि किसी भी बड़े संगठन या कार्य में जो आपका सबसे मजबूत स्तंभ (Core Strength) है, उसकी रक्षा और सम्मान करना सबसे पहला कर्तव्य होना चाहिए।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... किसी सामूहिक प्रयास की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि सभी सदस्य अपनी जिम्मेदारी निभाते हुए अपने मुख्य नेतृत्व को मजबूत रखें।

श्लोक संख्या: **1.12**

> तस्य सञ्जनयन्हर्षं कु रुवृद्धः पितामहः |
> सिंहनादं विनद्योच्चैः शङ्खं दध्मौ प्रतापवान् || **12** ||

हिन्दी अनुवाद:
कौरवों में वृद्ध, अत्यंत प्रतापी पितामह भीष्म ने उस दुर्योधन के हृदय में हर्ष उत्पन्न करते हुए उच्च स्वर से सिंह की दहाड़ के समान गरजकर शंख बजाया।

सरल व्याख्या:
दुर्योधन की व्याकु लता और चिंता को देखकर सेनापति भीष्म का वात्सल्य जाग उठता है। वे उसके भीतर उत्साह भरने के लिए शेर की तरह गरजते हुए अपना शंख बजाते हैं। यह शंखनाद युद्ध की आधिकारिक घोषणा है। एक कु शल और अनुभवी बुजुर्ग का यह दायित्व है कि वह युवाओं के डगमगाते हौसले को देखकर उसमें प्राण फूं क दे, भले ही परिस्थितियां कितनी भी कठिन क्यों न हों।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... संकट के समय वरिष्ठ जनों का एक छोटा सा सकारात्मक कदम भी अपनों के भीतर बड़े साहस का संचार कर देता है।

श्लोक संख्या: **1.13**

> ततः शङ्खाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः |
> सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत् || **13** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसके बाद शंख, नगाड़े, ढोल, मृदंग और नरसिंगे आदि बाजे एक साथ ही बज उठे; उनका वह शब्द बड़ा भयानक (तुमुल) हुआ।

सरल व्याख्या:
भीष्म पितामह का शंख बजते ही पूरी कौरव सेना में जोश की लहर दौड़ जाती है। सारे वाद्य यंत्र और शंख एक साथ गूंज उठते हैं। यह बाहरी शोर उस आंतरिक डर को दबाने की कोशिश है जो अधर्म के पक्ष में खड़े होने के कारण स्वाभाविक रूप से मन में होता है। जब मनुष्य भीतर से अशांत होता है, तो वह अक्सर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने के लिए बाहर बहुत बड़ा कोलाहल पैदा करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सामूहिक जोश का प्रदर्शन ऊपरी तौर पर माहौल को शक्तिशाली बना सकता है, लेकिन यह आंतरिक शक्ति का विकल्प नहीं हो सकता।

श्लोक संख्या: **1.14**

> ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ |
> माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शङ्खौ प्रदध्मतुः || **14** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसके बाद सफे द घोड़ों से युक्त एक विशाल और दिव्य रथ में बैठे हुए श्रीकृ ष्ण (माधव) और अर्जुन (पाण्डव) ने भी अपने- अपने दिव्य शंख बजाए।

सरल व्याख्या:
कौरवों के कोलाहल के जवाब में अब पाण्डवों की तरफ से हुंकार होती है। यहाँ सफे द घोड़ों से युक्त 'दिव्य रथ' सत्य और पवित्रता का प्रतीक है। जब जीवन के युद्ध में आपके रथ की कमान स्वयं परमात्मा (माधव) के हाथ में हो, तो आपका आत्मविश्वास एक अलग ही स्तर पर होता है। यह शंखनाद घोषणा है कि अब न्याय और सत्य का पक्ष अपनी पूरी दिव्यता के साथ मैदान में उतर चुका है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जहाँ पवित्रता, सत्य और सात्विक ऊर्जा होती है, वहाँ की प्रस्तुति में एक सहज दिव्यता और निर्भयता होती है।

श्लोक संख्या: **1.15**

> पाञ्चजन्यं हृषीके शो देवदत्तं धनञ्जयः |
>
> पौण्ड्रं दध्मौ महाशङ्खं भीमकर्मा वृकोदरः || **15** ||

हिन्दी अनुवाद:

श्रीकृ ष्ण ने 'पाञ्चजन्य' नामक शंख बजाया, अर्जुन ने 'देवदत्त' नाम का शंख और भयानक कर्म करने वाले भीमसेन ने 'पौण्ड्र' नामक महाशंख बजाया।

सरल व्याख्या:

यहाँ पाण्डव पक्ष के मुख्य नायकों के व्यक्तिगत शंखों के नाम दिए गए हैं। श्रीकृ ष्ण का शंख 'पाञ्चजन्य' इन्द्रियों और अंतःकरण को जाग्रत करने वाला है। अर्जुन का 'देवदत्त' दैवीय शक्तियों का आह्वान है, और भीम का 'पौण्ड्र' शत्रुओं के मन में भय पैदा करने वाला है। हर व्यक्ति के भीतर अपनी एक अनूठी क्षमता (शंख) होती है; जब समय आए, तो अपनी उस पूरी आंतरिक क्षमता को पूरी शक्ति से प्रकट कर देना चाहिए।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सत्य के मार्ग पर चलने वाले प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक विशिष्ट पहचान और जिम्मेदारी होती है, जिसे उसे पूरी निष्ठा से निभाना होता है।

श्लोक संख्या: **1.16**

> अनन्तविजयं राजा कु न्तीपुत्रो युधिष्ठिरः |
>
> नकु लः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ || **16** ||

हिन्दी अनुवाद:

कु न्तीपुत्र राजा युधिष्ठिर ने 'अनन्तविजय' नामक शंख बजाया तथा नकु ल और सहदेव ने 'सुघोष' और 'मणिपुष्पक' नाम के शंख बजाए।

सरल व्याख्या:

धर्मराज युधिष्ठिर का शंख 'अनन्तविजय' यह संके त देता है कि धर्म की विजय अनंत काल तक रहने वाली है। नकु ल और सहदेव भी अपने-अपने शंखों से वातावरण को गुंजायमान करते हैं। जब कोई बड़ा और नेक कार्य करना हो, तो परिवार या संगठन के हर छोटे-बड़े सदस्य का सुर में सुर मिलाना और अपनी आहुति देना अनिवार्य होता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... एक सफल संगठन वही है जहाँ नेतृत्व से लेकर अंतिम व्यक्ति तक सभी का संकल्प एक ही दिशा में कें द्रित हो।

श्लोक संख्या: **1.17 - 1.18**

> काश्यश्च परमेश्वासः शिखण्डी च महारथः |
> धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः || **17** ||
> द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते |
> सौभद्रश्च महाबाहुः शङ्खान्दध्मुः पृथक्पृथक् || **18** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे पृथ्वीपति! श्रेष्ठ धनुष वाले काशिराज, महारथी शिखण्डी, धृष्टद्युम्न, राजा विराट और अजेय सात्यकि, राजा द्रुपद, द्रौपदी के पाँचों पुत्र और बड़ी भुजाओं वाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु—इन सब ने सब ओर से अलग-अलग अपने-अपने शंख बजाए।

सरल व्याख्या:

संजय धृतराष्ट्र को बता रहे हैं कि पाण्डव सेना के कोने-कोने से शंखों की आवाज़ आ रही है। बूढ़े काशिराज से लेकर बालक अभिमन्यु तक, सब में एक ही उत्साह है। यह इस बात का प्रतीक है कि जब समाज में अन्याय के विरुद्ध कोई क्रांति उठती है, तो उसमें उम्र या पद का भेद मिट जाता है; हर कोई अपनी पूरी सामर्थ्य के साथ उठ खड़ा होता है।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... जब कोई उद्देश्य व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठकर समष्टि (सबके हित) के लिए होता है, तो वह सबको एक सूत्र में पिरो देता है।

श्लोक संख्या: **1.19**

> स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत् |
> नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादियन् || **19** ||

हिन्दी अनुवाद:

और उस भयानक शब्द ने आकाश और पृथ्वी को भी गुँजाते हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों (कौरवों) के हृदयों को विदीर्ण कर दिया (चीर डाला)।

सरल व्याख्या:

यह श्लोक मनोवैज्ञानिक दृष्टि से बहुत गहरा है। कौरवों ने भी शंख बजाए थे, पर पाण्डवों के शंखनाद ने कौरवों के 'हृदयों को विदीर्ण' कर दिया। ऐसा क्यों हुआ? क्योंकि कौरवों के भीतर अपराध बोध था। वे जानते थे कि वे गलत रास्ते पर हैं। जब कोई व्यक्ति गलत काम करता है, तो बाहर से वह कितना ही मजबूत दिखे, सत्य की एक छोटी सी हुंकार भी उसके भीतर के डर को जगा देती है और उसका हौसला तोड़ देती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अधर्म का सबसे बड़ा कमज़ोर बिंदु उसका अपना आंतरिक डर और आत्मग्लानि होती है, जो उसे भीतर ही भीतर खोखला कर देती है।

श्लोक संख्या: **1.20**

> अथ व्यवस्थितान्दृष्ट् वा धार्तराष्ट्रान्कपिध्वजः |
> प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः
> हृषीके शं तदा वाक्यमिदमाह महीपते ||| **20** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे राजन् (धृतराष्ट्र)! इसके बाद शस्त्र चलने की तैयारी होने के समय, (रथ पर लगे) कपिध्वज (हनुमान जी के चिह्न वाली ध्वजा) से युक्त पाण्डुपुत्र अर्जुन ने व्यवस्थित खड़े हुए धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखा और अपना धनुष उठाकर, इन्द्रियों के स्वामी हृषीके श श्रीकृ ष्ण से यह वचन कहा।

सरल व्याख्या:

युद्ध का वह चरम क्षण आ गया है जहाँ बाण चलने ही वाले हैं। ऐसे समय में अर्जुन अपने शत्रुओं को देखता है और कर्म में प्रवृत्त होने के लिए अपना धनुष 'गांडीव' उठाता है। अर्जुन के रथ पर स्वयं हनुमान जी (कपिध्वज) विराजमान हैं, जो परम एकाग्रता और विजय के प्रतीक हैं। अर्जुन इस मोड़ पर युद्ध शुरू करने से पहले अंतर्यामी भगवान श्रीकृ ष्ण (हृषीके श) से बात करने के लिए उद्यत होता है। यह दिखाता है कि एक सच्चा कर्मवीर संकट के ठीक सामने खड़े होकर घबराता नहीं, बल्कि पूरे आत्मबल के साथ अपने मार्गदर्शक से संवाद स्थापित करता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... किसी भी बड़े संघर्ष या निर्णय को शुरू करने के ठीक पहले, मनुष्य को अपने भीतर की सात्विक शक्तियों (हनुमान जी रूपी एकाग्रता) को जाग्रत करना चाहिए और अपने विवेक (श्रीकृ ष्ण) की शरण लेनी चाहिए।

श्लोक संख्या: **1.21 - 1.22**

> अर्जुन उवाच |
>
> सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत |
>
> यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान् || **21** ||
>
> कै र्मया सह योद्धव्यमस्मिन्रणसमुद्यमे || **22** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन बोले—हे अच्युत! मेरे रथ को दोनों सेनाओं के बीच में खड़ा कीजिए, जब तक कि मैं युद्ध की इच्छा से खड़े हुए इन विपक्षियों को अच्छी तरह देख न लूं कि इस युद्ध के उद्योग में मुझे किन-किन के साथ लड़ना योग्य है।

सरल व्याख्या:

अर्जुन पूरे पराक्रम और उत्साह से भरा है। वह श्रीकृ ष्ण को 'अच्युत' (जो कभी अपने स्वरूप से न डिगे) कहकर पुकारता है। वह किसी डर से नहीं, बल्कि एक विजेता के आत्मविश्वास से दोनों सेनाओं के बीच खड़े होकर शत्रुओं का आकलन करना चाहता है। जीवन के किसी भी बड़े संघर्ष में उतरने से पहले, अपने विरोधियों और परिस्थितियों का निष्पक्ष होकर अवलोकन करना आवश्यक होता है।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... कर्मक्षेत्र में पूरी ताकत से उतरने से पहले परिस्थितियों का सही और तटस्थ आकलन करना एक कु शल रणनीतिकार का पहला कदम है।

श्लोक संख्या: **1.23**

> योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः |
>
> धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः || **23** ||

हिन्दी अनुवाद:

दुर्बुद्धि दुर्योधन का युद्ध में हित चाहने वाले जो-जो ये राजा लोग यहाँ एकत्र हुए हैं, युद्ध करने आए हुए उन सबको मैं देख लूं।

सरल व्याख्या:

अर्जुन यहाँ दुर्योधन को 'दुर्बुद्धि' कहता है। उसे पूरा विश्वास है कि न्याय उसके पक्ष में है और जो लोग दुर्योधन की तरफ से लड़ रहे हैं, वे के वल एक पापी का साथ देने आए हैं। जब मनुष्य सत्य के मार्ग पर होता है, तो उसके भीतर एक नैतिक बल होता है जो अधर्म को तुच्छ समझता है। अर्जुन इसी ऊँ चे आत्मबल के साथ मैदान को देख रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... सत्य और न्याय के पक्ष में खड़े व्यक्ति का हौसला अधर्मियों की बड़ी संख्या को देखकर भी डगमगाता नहीं है।

श्लोक संख्या: **1.24**

> सञ्जय उवाच |
>
> एवमुक्तो हृषीके शो गुडाके शेन भारत |
>
> सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् || **24** ||

हिन्दी अनुवाद:

संजय बोले—हे भरतवंशी धृतराष्ट्र! अर्जुन (गुडाके श) द्वारा इस प्रकार कहे जाने पर हृषीके श श्रीकृ ष्ण ने दोनों सेनाओं के बीच में उस उत्तम रथ को खड़ा कर दिया।

सरल व्याख्या:

यहाँ अर्जुन को 'गुडाके श' कहा गया है, जिसका अर्थ है जिसने नींद (और अज्ञान) को जीत लिया हो। भगवान कृ ष्ण अर्जुन की इच्छा का मान रखते हुए रथ को ठीक बीच में लाकर खड़ा कर देते हैं। ईश्वर हमेशा अपने भक्त और सच्चे कर्मवीर की पुकार सुनते हैं और उसे सही मार्ग दिखाने के लिए स्वयं उसके सारथी बन जाते हैं।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब हम निश्छल भाव से कर्म में प्रवृत्त होते हैं, तो ईश्वरीय सत्ता स्वयं हमारी मार्गदर्शक बनकर हमें परिस्थितियों के कें द्र में ले आती है।

श्लोक संख्या: **1.25**

> भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम् |
>
> उवाच पार्थ पश्यैतान्समवेतान्कु रूनिति || **25** ||

हिन्दी अनुवाद:

भीष्म और द्रोणाचार्य के सामने तथा संपूर्ण राजाओं के सामने (रथ को खड़ा करके) श्रीकृ ष्ण ने कहा—हे पार्थ! इन एकत्र हुए कु रुवंशियों को देख।

सरल व्याख्या:

श्रीकृ ष्ण जानबूझकर रथ को भीष्म पितामह और गुरु द्रोणाचार्य के ठीक सामने खड़ा करते हैं और अर्जुन से कहते हैं, "इन कु रुवंशियों को देख।" भगवान यहाँ अर्जुन की उस सूक्ष्म परीक्षा की शुरुआत कर रहे हैं, जहाँ उसे अपने ही सगे-संबंधियों के मोह का सामना करना है। एक सच्चा गुरु कभी संकट को छु पाता नहीं, बल्कि उसे शिष्य के ठीक सामने लाकर खड़ा कर देता है ताकि शिष्य का आंतरिक रूपांतरण हो सके ।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जीवन में परीक्षा की घड़ियाँ अक्सर हमारे सबसे प्रिय और आदरणीय संबंधों के सामने ही आकर खड़ी होती हैं।

श्लोक संख्या: **1.26**

तत्रापश्यत्स्थितान्पार्थः पितॄनथ पितामहान् |
आचार्यान्मातुलान्भ्रातॄन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा |
श्वशुरान्सुहृदश्चैव सेनयोरुभयो रपि || **26** ||

हिन्दी अनुवाद:
इसके बाद पार्थ (अर्जुन) ने उन दोनों ही सेनाओं में स्थित ताऊ-चाचाओं को, दादाओं को, आचार्यों को, मामाओं को, भाइयों को, पुत्रों को, पौत्रों को तथा मित्रों को, ससुरों को और सुहृदों को भी देखा।

सरल व्याख्या:
जैसे ही अर्जुन की दृष्टि सामने पड़ती है, उसका पूरा दृष्टिकोण बदल जाता है। जहाँ वह पहले के वल 'शत्रु' और 'दुर्बुद्धि राजाओं' को देखने आया था, वहाँ अब उसे अपने ही परिवार के लोग—गुरु, दादा, भाई और मित्र दिखाई देने लगते हैं। यह संसार का वह दृश्य है जहाँ कर्तापन और ममता जागृत होती है। जब हम जीवन की समस्याओं को के वल अपने व्यक्तिगत रिश्तों के चश्मे से देखने लगते हैं, तो हमारा विवेक धुंधला होने लगता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब तक दृष्टि में 'पराया' था तब तक शौर्य था, लेकिन जैसे ही 'अपनापन' हावी हुआ, वैसे ही मन का संतुलन बिगड़ने लगा।

श्लोक संख्या: **1.27**

तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान्बन्धूनवस्थितान् |
कृ पया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत् || **27** ||

हिन्दी अनुवाद:
उन खड़े हुए संपूर्ण बंधुओं को देखकर वे कु न्तीपुत्र अर्जुन अत्यंत कायरतापूर्ण करुणा से युक्त होकर, शोक करते हुए यह वचन बोले।

सरल व्याख्या:
अपने ही बांधवों को युद्ध के मुहाने पर देखकर अर्जुन के भीतर एक झूठी करुणा (मोह) जाग उठती है। वह गहरे अवसाद (विषाद) में डूब जाता है। यह करुणा सात्विक नहीं है, बल्कि आसक्ति से पैदा हुई कमज़ोरी है। जब कर्तव्य कठोर होता है और सामने हमारे अपने हित आड़े आते हैं, तो मन अक्सर ऐसी ही कमज़ोर भावुकता की आड़ लेकर भागना चाहता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आसक्ति से उत्पन्न हुई भावुकता मनुष्य को उसके मुख्य कर्तव्य पथ से भटका देती है।

श्लोक संख्या: **1.28**

> अर्जुन उवाच |
>
> दृष्ट् वेमं स्वजनं कृ ष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् |
>
> सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति || **28** ||

हिन्दी अनुवाद:

अर्जुन बोले—हे कृ ष्ण! युद्ध की इच्छा से खड़े हुए इन अपने ही बांधवों (स्वजन) को देखकर मेरे अंग शिथिल हुए जा रहे हैं और मेरा मुख सूखा जा रहा है।

सरल व्याख्या:

यहाँ अर्जुन का शारीरिक और मानसिक संकट प्रकट होता है। 'स्वजन' शब्द ही उसके बंधन का कारण है। जो अर्जुन काल का सामना करने के लिए तैयार था, उसका शरीर अब साथ नहीं दे रहा है, हाथ-पैर ढीले पड़ रहे हैं और गला सूख रहा है। यह इस बात का सीधा प्रमाण है कि जब मन मानसिक द्वंद्व और गहरे तनाव से घिर जाता है, तो उसका सीधा असर हमारे शरीर की क्षमता पर भी पड़ता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मोह और आंतरिक असमंजस बड़े से बड़े बलवान व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक शक्ति को भी क्षण भर में क्षीण कर देता है।

श्लोक संख्या: **1.29**

> वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते |
>
> गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते || **29** ||

हिन्दी अनुवाद:

मेरे शरीर में कम्प और रोमांच हो रहा है तथा हाथ से गांडीव धनुष गिर रहा है और त्वचा में भी बहुत जलन हो रही है।

सरल व्याख्या:

अर्जुन की व्याकु लता अपनी चरम सीमा पर पहुँच चुकी है। जिस 'गांडीव' धनुष की टंकार से त्रिलोक कांपता था, वह आज उसके हाथ से छू टकर गिर रहा है। उसके पूरे शरीर में कम्पन है और भीतर एक आग सी लगी है। जब मनुष्य अपने सिद्धांतों और अपने व्यक्तिगत मोह के बीच बुरी तरह फं स जाता है, तो उसकी कर्म करने की मुख्य शक्ति (धनुष) उसका साथ छोड़ देती है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... वैचारिक स्पष्टता के बिना मनुष्य के कर्म करने के साधन और उसकी योग्यता भी व्यर्थ हो जाती है।

श्लोक संख्या: **1.30**

न च शक्नोम्यवस्थानं भ्रमतीव च मे मनः |
निमित्तानि च पश्यामी विपरीतनि के शव || **30** ||

हिन्दी अनुवाद:
और हे के शव! मैं खड़े रहने में भी समर्थ नहीं हूँ और मेरा मन भ्रमित सा हो रहा है तथा मैं लक्षणों (शकु नों) को भी विपरीत ही देख रहा हूँ।

सरल व्याख्या:
अर्जुन पूरी तरह से हिम्मत हार चुका है। उसका मन चारों तरफ से भ्रम की आंधी से घिर गया है। अब वह अपनी कमज़ोरी को सही ठहराने के लिए बाहरी लक्षणों और अपशकु नों का बहाना बनाने लगता है। वह कृ ष्ण को 'के शव' कहकर पुकारता है। जब मनुष्य भीतर से टूट जाता है, तो वह अपनी जिम्मेदारी स्वीकार करने की बजाय परिस्थितियों और किस्मत को दोष देने की कोशिश करने लगता है।

यह श्लोक हमें बताता है कि... मन का भ्रम जब बुद्धि पर हावी हो जाता है, तो व्यक्ति को हर परिस्थिति अपने विरुद्ध और विनाशकारी ही दिखाई देने लगती है।

श्लोक संख्या: **1.31**

न च श्रेयोऽनुपश्यामी हत्वा स्वजनमाहवे |
न काङ् क्षे विजयं कृ ष्ण न च राज्यं सुखानि च || **31** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे कृ ष्ण! युद्ध में अपने ही बान्धवों (स्वजन) को मारकर मैं कोई कल्याण नहीं देखता। मैं न तो विजय चाहता हूँ, न राज्य और न ही सुखों की कामना करता हूँ।

सरल व्याख्या:
अर्जुन का मानसिक द्वंद्व अब वैराग्य जैसी बातों के पीछे छिपने की कोशिश कर रहा है। वह कहता है कि जिन अपनों को मारकर राज्य मिलना है, वैसा राज्य और सुख मुझे नहीं चाहिए। जब मनुष्य कर्तव्य की कठिन चुनौती से घबराता है, तो वह अक्सर त्याग और वैराग्य के बड़े-बड़े तर्क देने लगता है, जबकि वास्तव में वह उसका आंतरिक डर होता है।

यह श्लोक हमें बताता है कि... कर्तव्य से भागने के लिए मन अक्सर झूठे त्याग और वैराग्य के तर्कों का सहारा लेता है।

श्लोक संख्या: **1.32 - 1.34**

> किं नो राज्येन गोविन्द किं भोगैर्जीवितेन वा |
> येषामर्थे काङ्क्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च || **32** ||
> त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च |
> आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः || **33** ||
> मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनस्तथा || **34** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे गोविन्द! हमें ऐसे राज्य से क्या लाभ, अथवा भोगों और जीवन से भी क्या प्रयोजन है? क्योंकि जिनके लिए हम राज्य, भोग और सुखादि की इच्छा करते हैं, वे ही सब आचार्य, ताऊ-चाचा, कु रुवंशी लड़के , दादा, मामा, ससुर, पोते, साले तथा अन्य सम्बन्धी लोग अपने प्राणों और धन की आशा को छोड़कर युद्ध में खड़े हैं।

सरल व्याख्या:

अर्जुन श्रीकृ ष्ण को 'गोविन्द' (इन्द्रियों को आनंद देने वाले) कहकर अपनी व्यथा सुनाता है। वह कहता है कि धन, संपदा और सुख का आनंद तो अपनों के साथ ही आता है। जब वे ही सामने मरने के लिए खड़े हैं, तो इस जीत का क्या मोल? अर्जुन की यह सोच सांसारिक दृष्टि से भावुक लग सकती है, लेकिन कर्मक्षेत्र में यह उसकी आसक्ति (Attachment) को दर्शाती है जो उसे सत्य के लिए लड़ने से रोक रही है।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... अत्यधिक पारिवारिक और सांसारिक आसक्ति मनुष्य की बुद्धि को धुंधला कर देती है, जिससे वह सही और गलत का अंतर भूल जाता है।

श्लोक संख्या: **1.35**

> एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन |
> अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृ ते || **35** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे मधुसूदन! मुझे मारने पर भी अथवा तीनों लोकों के राज्य के लिए भी मैं इन सबको मारना नहीं चाहता, फिर इस पृथ्वी के राज्य के लिए तो कहना ही क्या है?

सरल व्याख्या:
अर्जुन श्रीकृ ष्ण को 'मधुसूदन' (मधु नामक राक्षस का वध करने वाले) कहकर याद दिलाता है कि आप तो दुष्टों को मारते हैं, पर यहाँ तो मेरे अपने हैं। वह कहता है कि अगर ये मुझे मार भी दें, तो भी मैं इन पर हाथ नहीं उठाऊँ गा। यहाँ अर्जुन का अहंकार 'मैं नहीं मारूँ गा' के रूप में प्रकट हो रहा है। वह भूल रहा है कि यह युद्ध व्यक्तिगत बदला नहीं, बल्कि समाज में न्याय की स्थापना के लिए अनिवार्य हो चुका है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब मनुष्य किसी बड़ी जिम्मेदारी को व्यक्तिगत अहंकार या संबंधों के चश्मे से देखता है, तो वह समष्टि (पूरे समाज) के हित को अनदेखा कर देता है।

श्लोक संख्या: **1.36**

> निहत्य धार्तराष्ट्रान्नः का प्रीतिः स्याज्जनार्दन |
> पापमेवाश्रयेदस्मान्हत्वैतानाततायिनः || **36** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे जनार्दन! धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारकर हमें क्या प्रसन्नता होगी? इन आततायियों (अत्याचारियों) को मारकर तो हमें पाप ही लगेगा।

सरल व्याख्या:
अर्जुन कू टनीतिक और नैतिक तर्क देता है। नीति शास्त्र के अनुसार आततायी (जैसे ज़हर देने वाला, घर जलाने वाला, जमीन छीनने वाला) वध के योग्य होता है और कौरवों ने ये सारे पाप किए थे। लेकिन अर्जुन मोह में आकर कहता है कि इन्हें मारने से हमें के वल पाप और ग्लानि ही मिलेगी। जब मन किसी काम को नहीं करना चाहता, तो वह शास्त्रों की बातों को भी अपनी सहूलियत के हिसाब से तोड़-मरोड़ कर पेश करने लगता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... आंतरिक कमज़ोरी के वश में होकर बुद्धि अक्सर अधर्म और अत्याचार के सामने घुटने टेकने को ही धर्म मान बैठती है।

श्लोक संख्या: **1.37**

> तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान् |
> स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव || **37** ||

हिन्दी अनुवाद:

अतः हे माधव! अपने ही बान्धव धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारने के लिए हम योग्य नहीं हैं। क्योंकि अपने ही स्वजनों को मारकर हम कै से सुखी हो सकते हैं?

सरल व्याख्या:

अर्जुन बार-बार 'स्वजन' (अपने लोग) शब्द पर ज़ोर दे रहा है। वह कृ ष्ण को 'माधव' (लक्ष्मी के पति, यानी जो सबको वैभव और सुख देते हैं) कहकर पूछता है कि क्या अपनों का खून बहाकर कभी कोई सुखी हो सकता है? अर्जुन यहाँ दूरगामी परिणामों की चिंता कर रहा है, लेकिन उसकी चिंता का मूल कारण कर्तव्य-परायणता नहीं, बल्कि अपनों को खोने का डर है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अपनों के प्रति अंधा मोह मनुष्य को यह सोचने पर मजबूर कर देता है कि अन्याय को सह लेना अन्याय के खिलाफ लड़ने से बेहतर है।

श्लोक संख्या: **1.38 - 1.39**

> यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः |
> कु लक्षयकृ तं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् || **38** ||
> कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्नवर्तितुम् |
> कु लक्षयकृ तं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन || **39** ||

हिन्दी अनुवाद:

यद्यपि लोभ से भ्रष्ट चित्त वाले ये लोग कु ल के नाश से होने वाले दोष को और मित्रों से द्रोह करने में होने वाले पाप को नहीं देख रहे हैं, तो भी हे जनार्दन! कु ल के नाश से होने वाले दोष को ठीक से जानने वाले हम लोगों को इस पाप से हटने के लिए क्यों नहीं विचार करना चाहिए?

सरल व्याख्या:

अर्जुन कहता है कि दुर्योधन और उसके साथी तो लोभ में अंधे हो चुके हैं, इसलिए वे कु ल के विनाश का परिणाम नहीं देख पा रहे। लेकिन हम तो समझदार हैं, हम इस विनाश के दोष को जानते हैं, तो हमें इस युद्ध से पीछे हट जाना चाहिए। यहाँ अर्जुन खुद को कौरवों से श्रेष्ठ और बुद्धिमान मान रहा है। यह मन की वह चालाकी है जो सही समय पर कड़े कदम उठाने से बचने के लिए खुद को 'अति-समझदार' और 'सभ्य' दिखाने का प्रयास करती है।

> ये श्लोक हमें बताते हैं कि... दूसरों की गलती को देखकर स्वयं को श्रेष्ठ मानना और उस आधार पर अपने अनिवार्य कर्तव्य से पैर पीछे खींचना बुद्धिमानी नहीं, बल्कि कायरता है।

श्लोक संख्या: **1.40**

> कु लक्षये प्रणश्यन्ति कु लधर्माः सनातनाः |
> धर्मे नष्टे कु लं कृ त्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत || **40** ||

हिन्दी अनुवाद:

कु ल का नाश होने पर सनातन कु ल-परम्पराएँ (कु लधर्म) नष्ट हो जाती हैं और धर्म के नष्ट हो जाने पर संपूर्ण कु ल में अधर्म (पाप) बहुत अधिक फै ल जाता है।

सरल व्याख्या:

यहाँ से अर्जुन समाजशास्त्र और पारिवारिक व्यवस्था के बिगड़ने का तर्क देना शुरू करता है। वह कहता है कि युद्ध में जब कु ल के मुख्य पुरुष मारे जाते हैं, तो सदियों से चली आ रही पारिवारिक परंपराएं, संस्कार और नैतिक मूल्य (कु लधर्म) समाप्त हो जाते हैं। और जब घर या समाज से धर्म का अंकु श हट जाता है, तो पूरी व्यवस्था में अधर्म और अराजकता फै ल जाती है। अर्जुन का यह तर्क सामाजिक दृष्टि से सत्य है, लेकिन उसका उपयोग वह रणभूमि से भागने के बहाने के रूप में कर रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... एक मजबूत समाज की नींव परिवारों के नैतिक मूल्यों और संस्कारों पर टिकी होती है; यदि वे नष्ट हो जाएं तो अधर्म का प्रसार तेजी से होता है।

श्लोक संख्या: **1.41**

> अधर्माभिभवात्कृ ष्ण प्रदुष्यन्ति कु लस्त्रियः |
> स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसङ्करः || **41** ||

हिन्दी अनुवाद:

हे कृ ष्ण! अधर्म के अधिक बढ़ जाने से कु ल की स्त्रियाँ दूषित हो जाती हैं और हे वार्ष्णेय (वृष्णिवंशोत्पन्न कृ ष्ण)! स्त्रियों के दूषित हो जाने पर वर्णसंकर (अवांछित संतानें) उत्पन्न होती हैं।

सरल व्याख्या:

अर्जुन सामाजिक ताने-बाने के बिखरने की बात कर रहा है। वह कहता है कि जब समाज में अधर्म का बोलबाला होता है, तो सबसे गहरा आघात कु ल की पवित्रता और स्त्री शक्ति की सुरक्षा पर पड़ता है। जब समाज की स्त्रियाँ असुरक्षित या पथभ्रष्ट होती हैं, तो आने वाली पीढ़ी संस्कारों से विहीन हो जाती है। अर्जुन का यह तर्क समाज की नींव को लेकर है, जहाँ नैतिक मूल्यों के ह्रास का डर उसे सता रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... किसी भी समाज और संस्कृ ति की रक्षा का मुख्य आधार वहाँ की स्त्रियों का सम्मान, सुरक्षा और उच्च संस्कार होते हैं।

श्लोक संख्या: **1.42**

> सङ्करो नरकायैव कु लघ्नानां कु लस्य च |
> पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः || **42** ||

हिन्दी अनुवाद:

वह वर्णसंकर कु ल का नाश करने वालों को और कु ल को नरक में ले जाने के लिए ही होता है। पितरों को पिण्ड और जल न मिलने से (श्राद्ध-तर्पण बंद हो जाने से) उनके पितर भी गिर जाते हैं।

सरल व्याख्या:

अर्जुन सनातन परंपराओं के टूटने का तर्क आगे बढ़ाता है। वह कहता है कि संस्कारों के बिना जो पीढ़ी आती है, वह अपनी मर्यादाओं को भूल जाती है। इसके कारण पूर्वजों के प्रति जो कृ तज्ञता और तर्पण (पिण्डोदक क्रिया) की परंपरा है, वह लुप्त हो जाती है। यह श्लोक हमें पूर्वजों के प्रति सम्मान और अपनी जड़ों से जुड़े रहने का महत्व समझाता है, जिसे अर्जुन युद्ध न करने का एक और कारण बना रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... अपनी परंपराओं और पूर्वजों के प्रति कृ तज्ञता की भावना छोड़ देने से समाज सांस्कृ तिक रूप से पतन की ओर चला जाता है।

श्लोक संख्या: **1.43**

> दोषैरेतैः कु लघ्नानां वर्णसङ्करकारकैः |
> उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कु लधर्माश्च शाश्वताः || **43** ||

हिन्दी अनुवाद:

इन वर्णसंकर पैदा करने वाले दोषों से कु ल का नाश करने वालों के सनातन कु लधर्म और जातिधर्म (सामुदायिक कर्तव्य) नष्ट हो जाते हैं।

सरल व्याख्या:

अर्जुन कहता है कि गृहयुद्ध या अपनों के आपसी टकराव से समाज में जो विकृ ति आती है, वह पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलने वाले शाश्वत नियमों को समाप्त कर देती है। व्यक्ति अपने मूल कर्तव्यों (जातिधर्म और कु लधर्म) से भटक जाता है। जब समाज की सामूहिक चेतना ही नष्ट हो जाती है, तो नियमों का कोई मोल नहीं रह जाता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... एक बड़ा विनाश के वल इंसानों को नहीं मारता, बल्कि सदियों से स्थापित नैतिक और सामाजिक व्यवस्था को भी ध्वस्त कर देता है।

श्लोक संख्या: **1.44**

> उत्सन्नकु लधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन |
> नरके नियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम || **44** ||

हिन्दी अनुवाद:
हे जनार्दन! जिनके कु लधर्म नष्ट हो गए हैं, ऐसे मनुष्यों का निश्चित रूप से नरक में निवास होता है, ऐसा हम सुनते आए हैं।

सरल व्याख्या:
अर्जुन यहाँ अपने बड़ों और गुरुओं से सुनी हुई बातों का हवाला देता है। वह कहता है कि जो समाज अपनी मर्यादा और धर्म को खो देता है, उसका जीवन जीते-जी नरक जैसा कष्टकारी बन जाता है। अर्जुन का यह कथन उसकी गहरी मानसिक पीड़ा को दर्शाता है; वह युद्ध के परिणाम को लेकर इतना भयभीत है कि उसे के वल विनाश और नरक ही सूझ रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब मन में नकारात्मकता हावी होती है, तो सीखी हुई सारी बातें भी के वल भय और निराशा को ही बढ़ावा देने लगती हैं।

श्लोक संख्या: **1.45**

> अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम् |
> यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः || **45** ||

हिन्दी अनुवाद:
हा! शोक! हम लोग बुद्धिमान होकर भी महान पाप करने को तैयार हो गए हैं, जो राज्य और सुख के लोभ से अपने बान्धवों को मारने के लिए उद्यत (तैयार) हो गए हैं।

सरल व्याख्या:
अब अर्जुन गहरी आत्मग्लानि (Guilt) से घिर चुका है। वह खुद को और पाण्डवों को धिक्कारते हुए कहता है कि हम तो समझदार थे, फिर भी राज्य के छोटे से सुख के लोभ में आकर इतना बड़ा पाप करने चल पड़े हैं। यहाँ अर्जुन का द्वंद्व अपने चरम पर है। वह समझदारी की आड़ में कड़े और अप्रिय निर्णयों से बचना चाह रहा है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... कर्तव्य पथ पर मिलने वाले कष्टों को देखकर मन अक्सर बड़े लक्ष्यों को 'लोभ' का नाम देकर खुद को पीछे खींचने का बहाना ढूंढता है।

श्लोक संख्या: **1.46**

> यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः |
> धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् || **46** ||

हिन्दी अनुवाद:
यदि मुझ शस्त्ररहित और सामना न करने वाले को हाथ में शस्त्र लिए हुए धृतराष्ट्र के पुत्र रणभूमि में मार भी दें, तो वह मारना भी मेरे लिए अधिक कल्याणकारी होगा।

सरल व्याख्या:
यह अर्जुन के मानसिक अवसाद की पराकाष्ठा है। वह पूरी तरह हथियार डालने को तैयार है। वह कहता है कि इससे तो बेहतर है कि मैं बिना हथियार उठाए खड़ा रहूं और कौरव मुझे मार डालें। कम से कम मेरे सिर पर अपनों के खून का पाप तो नहीं लगेगा। यह उस वीर अर्जुन के मुख से निकल रहा है जिसने बड़े-बड़े युद्ध जीते थे। जब डिप्रेशन या गहरे तनाव में मनुष्य की बुद्धि काम करना बंद कर देती है, तो वह जीवन से ही हार मान बैठता है।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... जब मानसिक मनोबल टूट जाता है, तो महापराक्रमी व्यक्ति भी संघर्ष करने की बजाय खुद को पूरी तरह समर्पित **(Surrender)** कर देना बेहतर समझता है।

श्लोक संख्या: **1.47**

> सञ्जय उवाच |
> एवमुक्त्वार्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थ उपाविशत |
> विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः || **47** ||

हिन्दी अनुवाद:
संजय बोले—रणभूमि में शोक से उद्विग्न (व्याकु ल) मन वाले अर्जुन ने इस प्रकार कहकर, बाणसहित धनुष को त्यागकर रथ के पिछले भाग में बैठ गए।

सरल व्याख्या:
यह पहले अध्याय का अंतिम दृश्य है। कु रुक्षेत्र का मैदान सज चुका है, शंख बज चुके हैं, बाण चलने ही वाले हैं, और ऐसे में पाण्डवों का मुख्य योद्धा अर्जुन अपने हाथ से धनुष-बाण छोड़कर रोता हुआ रथ के पिछले हिस्से में बैठ जाता है। उसका मन शोक और भ्रम से भर चुका है। यह श्लोक यह दिखाता है कि बाहरी साधन कितने भी श्रेष्ठ क्यों न हों, जब तक भीतर मन का संतुलन और वैचारिक स्पष्टता नहीं होगी, इंसान कर्मक्षेत्र में खड़ा नहीं रह सकता।

> यह श्लोक हमें बताता है कि... मन की कमज़ोरी व्यक्ति को सबसे महत्वपूर्ण क्षण में भी निष्क्रिय और हताश कर देती है।

ॐ तत्सदिति श्रीमद्भगवद्गीतासूपनिषत्सु ब्रह्मविद्यायां योगशास्त्रे श्रीकृ ष्णार्जुनसंवादे

अर्जुनविषादयोगो नाम प्रथमोऽध्यायः || **1** ||